International Journal of Applied Research 2021; 7(2): 82-84

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(2): 82-84
www.allresearchjournal.com
Received: 10-12-2020
Accepted: 12-01-2021

रुचि पाण्डेय
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
शासकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, सतना, मध्य प्रदेश,
भारत

Corresponding Author:
रुचि पाण्डेय
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
शासकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, सतना, मध्य प्रदेश,
भारत

कुँवर नारायण के काव्य की भाषिक संरचना, छंदविधान एवं शैल्पिक श्रेष्ठताएँ

रुचि पाण्डेय

सारांश
कुँवर नारायण के काव्यों में छन्दों के साथ कुछ प्रयोग किए दिखाई पड़ते हैं, परन्तु इस विषय में उन्होंने स्वयं कहा है कि 'छन्दों का हमेशा काव्य का जरूरी हिस्सा नहीं माना गया। छन्द मात्र काव्यों को अलंकरित करने का कार्य करते है, परन्तु मैंने छन्दों को अलंकार या सजावट न मानकर काव्य की तरह महत्वपूर्ण माना है। नयी कविता की यह विशेषता रही है कि इसकी भाषा, सरल, विचार के अनुरूप, स्वाभाविक, प्रभावात्मक रही है, इसी बधी हुई परिपाटी का पालन कुँवर नारायण ने भी किया, उनकी भाषा में भाषा का प्रवाह, प्रभावात्मकता, अर्थवत्ता, सजीवता, प्रसंगानुकूलता देखने को मिलता है।

कुटशब्दः कुँवर नारायण, भाषिक संरचना, छंदविधान, शैल्पिक श्रेष्ठताएँ

प्रस्तावना
हिन्दी कविता में प्रयोगवाद के वास्तविक जनक 1943 में अज्ञेय जी को स्वीकारना होगा, यद्यपि इसका उद्घाटन तो महाकवि निराला ने ही कर दिया था। अज्ञेय जी ने तार सप्तकों की श्रृंखला में तीसरे सप्तक का संपादन करते हुए विभिन्न विचारधाराओं के कवियों को संग्रहीत कर यह प्रतिपादित किया था कि 'ये कवि किसी मंजिल पर पहुंचे हुए नहीं है, अभी राही है – राही भी नहीं, राहों के अन्वेषी। तीसरे तार सप्तक के कवियों में प्रयाग नारायण त्रिपाठी, कीर्ति चौधरी, मदन वात्सायन, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, विजय देवनारायण साही और सर्वेश्वर दयाल सक्सेना है। अनेक कवियों में प्रयाग नारायण त्रिपाठी, कुँवर नारायण और सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की कविताओं को लम्बे समय तक याद किया जायेगा, इसी आस्था और विश्वास पर कुँवर नारायण जी की कालजयी कृतित्व पर यह शोध वैशिष्ट्य निरूपण की दिशाएं प्रस्तुत हो रहा है। प्रत्येक कवि का अपना एक स्कूल बनाने के प्रयास में अज्ञेय जी स्वयं कुछ भटके प्रतीत होते है, पर कुँवर नारायण जी के काव्य वैशिष्ट्य को उन्होंने भी स्वीकार किया है तथा समर्थ कवि के रूप में उनकी प्रतिष्ठा की है। उच्च स्तरीय अस्मितावाद और गहनतर नव रहस्यवाद से निष्पन्न, कुँवर नारायण की कविताओं में पौराणिक मिथकों के भीतर तत्वदर्शी निष्कर्षों की मंजूषा सम्हालकर रखी जाने योग्य है। प्रयोगवादी कवियों में दलवादी प्रतिबद्धताओं से परे कुँवर जी का अपना चिंतन और काव्य संसार है। कुँवर नारायण जी की गहन मौलिकता उन्हें तलस्पर्शी संवेदनाओं, विचारों और भावनाओं का कवि निरूपित करती है। व्यक्तिवादी चेतना के साथ गहन अनुभूति पक्ष से भी कुँवर जी का काव्य प्राणवान हुआ है। प्रयोग को अपने आप में इष्ट और साध्य मानने में अज्ञेय जी की तरह कुँवर जी ने भी असहमति प्रदान की हैं।
कुँवर नारायण जी के काव्य को समग्रतः देखने पर यह स्थिति स्पष्ट हो जाती है कि वे सांस्कृति द्वन्द्व में फसे हुए मनुष्य में पूर्णता के अन्वेषी हैं तथा एक संतुलित दृष्टि लेकर काव्य और कला को अपकर्श से निरंतर बचाने का प्रयास करते है। तीसरे सप्तक के पूर्ण कवि के रूप में आपका अलग वैशिष्ट्य है, जो सर्वथा मूल्यधर्मी है। आपका आत्मजयी एक गहनतर काव्य है और यहीं कृति कुँवर जी को सांस्कृतिक कवि सिद्ध करती है।
यदि हम छायावादोत्तर हिन्दी कविता के ऐतिहासिक विकास क्रम पर दृष्टि डाले तो इस काल की काव्य प्रवृत्तियाँ अनेक रूपों में अलंकृत होकर निखर कर सामने आई हैं, इस काल में कवियों ने मौलिक संवेदनशीलता को अधिकृत किया।

भाषिक संरचना का स्वरूप
नयी कविता की यह विशेषता रही है, कि इसकी भाषा सरल, विचार के अनुरूप, स्वाभाविक, प्रभावात्मक रही है, इसी बधी हुई परिपाटी का पालन कुँवर नारायण ने भी किया। उनकी भाषा में भाषा का प्रवाह, प्रभावात्मकता, अर्थवत्ता, सजीवता, प्रसंगानुकूलता देखने को मिलती है।

किसी भी कवि को अपनी भाषा को प्रभावमयी तभी मानना चाहिए जब काव्यों में उनके द्वारा कही गई बात पाठक या श्रोता तक पहुँचे और कुँवर नारायण इस कार्य में पूरी तरह सफल भी हुए हैं।

कवि के काव्यों में मिट्टी की महक व प्रकृति की झलक देखने को मिलती है, बड़ी–सी बड़ी बात को बड़ी सहजता से निरन्तर प्रवाहमयी भाषा के माध्यम से बड़ी विनम्रता से कह डालना कुँवर नारायण की विशेषता रही है।[1]

कवि का सर्वप्रथम कर्तव्य यह है, कि उसके काव्य की भाषा ऐसी होनी चाहिए, जिसमें दार्शनिक शब्दावली के साथ–साथ बोलचाल की भाषा का भी प्रयोग हो क्योंकि उनके काव्यों को पढ़ने वाले सामान्यजन भी होते हैं और उन तक कवि की कही गई बातों का संप्रेषण होना चाहिए, कुँवर नारायण के काव्यों में यह विशेषता दृष्टिगोचर है। उन्होंने अपने काव्यों में बोलचाल की भाषा के प्रयोग से नवीनता का समावेश किया है। न केवल नवीनता अपितु अर्थवत्ता, सार्थकता भी इनकी काव्यगत विशेषता में अंगीकृत है।[2]

कुँवर नारायण के काव्यों में छन्द, लय की कुछ भूले अवश्य दिखलाई पड़ी है किन्तु इसे हम प्रयोगी काव्य के अन्तर्गत रख कर कुछ हद तक नजर अन्दाज कर सकते हैं। परन्तु जहाँ तक भाषा का सवाल है तो कुँवर नारायण ने अपने काव्यों में हिन्दी, उर्दू, फारसी, संस्कृत व अंग्रेजी का यथास्थान प्रयोग किया। कुँवर नारायण पहले कवि नहीं जिन्होंने भाषा के साथ प्रयोग किए इनसे पहले 'मुक्तिबोध' व अज्ञेय' ने भी भाषाओं की सीमाओं का खण्डन किया है।

यदि 'आत्मजयी' की भाषा की बात करे तो मूलतः कठोपनिषद् 'संस्कृत' में लिखा गया, परन्तु कुँवर नारायण ने 'आत्मजयी' में उर्दू, फारसी, हिन्दी व संस्कृत भाषाओं का इस्तेमाल किया, जाहिर है, इस प्रयोग पर तो आपत्तियाँ उठनी ही थी, तो इस बारे में कुँवर नारायण ने अपना तर्क प्रस्तुत किया –

'आत्मजयी' में हिन्दी भाषा के सम्पूर्ण अनुभव का इस्तेमाल किया गया है– यह हठ नहीं रहा कि छायावादी भाषा–अनुभव को बाहर रखा जाए। उर्दू शब्दों के इस्तेमाल पर कुछ आपत्तियाँ उठी हैं– उनके लिए भी मेरा वही तर्क है जो छायावादी शब्दों के लिए कि कविता को ज्यादा–से–ज्यादा बड़ी भाषायी जमीन पर विचरण करना है, अपने लिए किसी खास तरह की भाषा रूढ़ि नहीं बनाना है, चाहे वह भाषा नयी कविता की ही क्यों न हो।''[3]

कुँवर नारायणा काव्य की भाषा को लेकर अपने विचार रखते हैं, कि – ''कविता और भाषा की कोई सीमा नहीं। एक कविता की भाषा उसके अपने भीतरी तर्क और जरूरतों से निकलती है।[4] जब भी हम भाषा की सीमा बनाएंगे कि वह इस प्रकार हो या उस प्रकार की हो, कविता की सीमाएँ अपने आप बन जाएँगी मैं कविता और भाषा के बीच बिल्कुल खुला और उन्मुक्त विचरण पसन्द करता हूँ और इस विचरण के लिए भाषा का बड़े–से–बड़े अनुभव क्षेत्र भी कम हैं।''[5] कुँवर नारायण की भाषा की खासियत रही है, कि वे काव्य के अनुरूप भाषा को लोच प्रदान कर देते हैं, काव्य के विषय के अनुरूप भाषा का इस्तेमाल कर काव्य को सजीवता प्रदान करते हैं।[6]

हम यह कह सकते हैं कि कुँवर नारायण का अपनी बात कहने का एक अलग प्रकार का तरीका है, उनका अपने तरह का शिल्प है, जिसमें संवेदनाओं की तीव्रता, सादगी और नये जमाने की तस्वीर साफ–साफ दिखाई देती है, उनकी अपनी तरह की भाषा है, उन्होंने अपने काव्यों में भाषा की सारी सीमाओं का उल्लंघन कर सभी भाषाओं को आत्मसात किया है।

सदृश्य विधान

काव्य की रचना के लिए कवि का काव्य विषय पर मजबूत पकड़ होना आवश्यक है, प्रयोगवादी कवियों ने नयी कविता में विषय की सीमारेखा का निश्चित रूप से उल्लंघन किया, नये–नये विषयों को काव्य का रूप दिया, अब काव्य चाहे छन्दों के अनुरूप हो या न हो।

कुँवर नारायण ने भी काव्यों की रचना में विषयों की परवाह न करते हुए, जहाँ कहीं भी जो भी कुछ ऐसा देखा जो उनके हृदय को छू गया– काव्य बन गया, काव्य की एक विधा सदृश्य विधान के अन्तर्गत वैसे तो कुँवर नारायणा ने बहुत कम ही लिखा किन्तु जो कुछ भी लिखा गया वह अद्वितीय रहा।

कवि ने 'जाड़ों की एक सुबह' में जाड़े के दिनों का वर्णन किया है व कवि ने प्रकृति की खूबसूरती का बखान अपने तरह से किया।[7]

कुँवर नारायण ने सदृश्य विधान में आँखों से ग्रहण की गए दृश्यों में अपने मोहक शब्दों का पुट देकर उसका भावों और संवेदनाओं से प्रसंग करा अपने काव्यों की रचना की।

कुँवर नारायण ने अपने काव्यों में उन विषयों और पहलुओं को छुआ जिनकी अन्य कवियों ने अनदेखी की जैसे 'अपने–सामने' संग्रह का 'लखनऊ' काव्य में कवि ने लखनऊ की दुर्दशा का विवरण कुछ इन शब्दों में दिया –

''किसी नौजवान के जवान तरीकों पर त्योरियाँ चढ़ाए
एक टूटी आरामकुर्सी पर
अधलेटे
अधमरे बूढ़े–सा खासता हुआ लखनऊ।
कॉफी–हाउस, हजरतगंज, अमीनाबाद और चौक तक
चार तहजीबों में बँटा हुआ लखनऊ।''[8]

कुँवर नारायण पर यह आरोप अधिकतर लगाए गए कि उन्होंने अपने काव्यों पर इतिहास की घुसपैठ कुछ ज्यादा ही कराई, कुछ हद तक यह आरोप सही भी है, कुँवर नारायण ने इतिहास को अपने काव्यों में बड़ी ही रूमानियत के साथ उतारा। उन्होंने कई ऐतिहासिक स्थलों की यात्रा की व बादशाहों की बादशाहत का नजारा प्रस्तुत करने की चेष्ठा की, न अब बादशाह रहे और न बादशाहत पर उनके गवाह, वो पुराने महलों के खण्डहर आज भी साक्षी बने हैं।[9]

''नयी कविता का वर्ण्य–विषय या कथ्य अपने से पूर्ववर्ती कविता की अपेक्षा भिन्न और विशिष्ट है। उसमें मानवीय अनुभूतियों तथा संवेदनाओं को नयी दृष्टि से देखा, समझा, भोगा और वर्णित किया गया है। नये कवि का दृष्टिकोण भावुकता की अपेक्षा वैचारिकता ने अनुप्राणित है। वह अपनी निजी अनुभूतियों–प्रेम, सुख–दुःख, पीड़ा, विरह, आक्रोश और करुणा को भी एक नए ढंग से भोगने और व्यक्त करने में विश्वास करता है।''[10]

रमेशचन्द्र शाह के अनुसार

कुँवर नारायण की कविता के ये संस्मरण इकहरी काट के नहीं, बल्कि जीवनानुभूतियों के एक विविध और विस्तृत वर्णपट को झलकाने वाले हैं। कुँवर नारायण इस अर्थोन्मेष्टा अंतर्द्वन्द्व के कवि हैं। 'चक्रव्यूह' की एक कविता का उल्लेख भी प्रासंगिक होगा जिसमें कविता का नायक 'किसी अंदेशे के' भयानक किनारे पर बैठा आकाश की नीली सतह पर तैरती उन असंख्य सीमियों को देख रहा है।[11]

'अनामिका' ने कुँवर नारायण के दृश्य विधान पर प्रकाश डालते हुए लिखा

सेलिब्रेशन, गीतात्मकता की पहचान है और गीतात्मकता सरलचिन्त पलायन, प्रवण, गैर जिम्मेदार, आत्मनिष्ठ, अर्द्धशिक्षित, गँवई बाँवरों, अधपागलों का कच्चा रोना–गाना यह मानने वाले आधुनिकतावादी आलोचक ही रहे हैं। भरे चौक का इकतारा बजा कर नाचते फकीरों की तरह यह गीतात्मकता चौक के घन–चक्कर यथार्थ से पूरी तरह बेखबर होती है।[12]

कुँवर नारायण ने अपने काव्यों में रूढ़ियों और संवेदनाओं से कुछ हद तक परहेज किया है वे यथार्थ के पटल पर काव्यों की रूपरेखा तैयार करते हैं। समाज में, परिवेश में, प्रकृति में घटित होने वाले तथ्यों को उन्होंने अपने काव्य का विषय बनाया व नेत्रों के मार्ग से ग्रहण की गई चेतनाओं को दार्शनिक पटल पर रख काव्य निर्माण किया।

छन्दमुक्ति की विशिष्टता एवं समग्र आंकलन

नयी कविता में लय तथा अपेक्षित प्रभावात्मकता के लिए छन्द के महत्व को स्वीकार किया गया है, भले ही दूसरी बात है, कि उसके स्वरूप में नवीनता आ गयी हैं, कुँवर नारायण की छनद सम्बन्धी मान्यता उन्हीं के शब्दो में इस प्रकार है–

'खड़ी बोली को विरासत में जो छन्द मिलें वे पहले ही संस्कृत, बृज भाषा और अवधि के स्वभाव में ढ़ल चुके थे, उनमें बधी कविता बरबस उन्हीं काव्य परम्पराओं की गंध देती है। एक ही भाव या विचार को विविध छन्दों में रच कर देखा जा सकता है, कि कैसे छन्द विशेष के अनुरूप ही भाव अपना प्रभाव बदल देते हैं।''[13]

एक अन्य स्थान पर कुँवर नारायण से छन्दों के लुप्त होने का कारण पूछा गया तो उनका कहना था कि – "संस्कृत 'काव्यशास्त्र' में छन्दों

और तुकों, को कभी भी कविता के लिए अनिवार्य नहीं माना गया व सिद्धांततः न ही व्यवहार में दसवीं सदी के साहित्य शास्त्रीय, 'राजशेखर' की प्रसिद्ध मान्यता है, कि 'उक्ति–वैशिष्ट्य' ही काव्य है, 'छंदों और तुकों को लेकर निष्पक्ष है। छन्दों को हमेशा कविता का अलंकरण माना गया उसका जरूरी हिस्सा नहीं। उसका एक कारण यह भी जान पड़ता है कि काव्य शब्द क्योंकि साहित्य के बेहतर अर्थ में प्रयुक्त होता रहा। इसलिए बाद में कविता के सीमित अर्थ में प्रयुक्त होने पर भी एक व्यापक साहित्य संदर्भ को समेटे रहा।

निष्कर्ष

कुँवर नारायण अपने काव्यों को पौराणिक पुट देकर उनमें मिथकीय संयोजना भी किया है। उनकी काव्य कृति 'आत्मजयी' इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। कुँवर नारायण प्रयोगवर्ती काव्य धारा के कवि है। अतः उन्होंने अपने काव्यों को पूर्ण आकाश प्रदान किया व काव्यों संचरण की पूर्ण व्यवस्था भी की। हाँ छन्द व लय, तुकबन्दी जैसे तथ्य काव्यों की बेड़ियाँ बने तो उन्होंने इन बेड़ियों का खण्डन करते हुए काव्यों में इनसे सम्बन्धित नियमों का बहिष्कार किया व मुक्त छन्द कविताएं लिखीं व काव्य सृजनात्मकता को नयी कविता प्रदान की। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि कुँवर नारायण एक सुलझे हुए कवि, कथाकार व समीक्षक है, उनके काव्यों में नवीनता की महक सम्मलित हैं, दो सदियों के प्रतिनिधित्व करने वाले इस कवि ने समय की माँग के अनुसार काव्य रचना की व यश प्राप्त किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कुँवर नारायण का संसार, यतीन्द्र मिश्र, पृष्ठ 36
2. वाज्रश्रवा के बहाने, कुँवर नारायण, पृष्ठ 129
3. कुँवर नारायण उपस्थिति, यतीन्द्र मिश्र, पृष्ठ 73
4. आत्मजयी, कुँवर नारायण, पृष्ठ 51
5. कुँवर नारायण उपस्थिति, यतीन्द्र मिश्र, पृष्ठ 13
6. कुँवर नारायण का संसार, यतीन्द्र मिश्र, पृष्ठ 59
7. तीसरा सप्तक, कुँवर नारायण, पृष्ठ 161
8. कुँवर नारायण का संसार, यतीन्द्र मिश्र, पृष्ठ 103
9. कुँवर नारायण का संसार, यतीन्द्र मिश्र, पृष्ठ 108
10. छायावादोत्तर हिन्दी कविता एक विवेचना, डॉ. कृष्णदेव शर्मा, डॉ. माया अग्रवाल, पृष्ठ 141
11. कुँवर नारायण उपस्थिति, यतीन्द्र मिश्र, पृष्ठ 184
12. कुँवर नारायण उपस्थिति, यतीन्द्र मिश्र, पृष्ठ 405
13. छायावादोत्तर हिन्दी कविता एक विवेचना, डॉ. कृष्णदेव शर्मा, डॉ. माया अग्रवाल, पृष्ठ 156.